विषय–भूगोल, कक्षा–11

गजेन्द्र प्रसाद प्रवक्ता
भूगोल
रा0इ0का0 कनालीछीना
मो0–9412952099

महासागरों और महाद्वीपों का वितरण

सम्पूर्ण पृथ्वी महाद्वीपों एवं महासागरों का योग है। महाद्वीप और महासागर पृथ्वी के ग्रथम श्रेणी के उचावच के अन्तर्गत सम्मिलित किए जाते हैं। पृथ्वी की भूपर्मटी का 71% भाग महासागरों तथा 29% भू–भाग महाद्वीपों से घिरा हुआ है। धरातल पर महाद्वीपों एवं महासाकरों की जो वर्तमान स्थिति दृष्टिगोचर हो रही है ऐसी अवस्था पूर्व में नहीं थी। इनकी उत्पत्ति, विस्तार तथा विकास के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने अलग–अलग मत प्रस्तुत किए हैं।

सर्वप्रथम सन् 1620 ई0 में फ्रांसिस ब्रेकन ने अटलांटिक महासागर के पश्चिम और पूर्व तटीय भाग एक दूसरे से जुड़े हुए थे। जो कालान्तर में खिसककर वर्तमान स्थिति में आए। सन्1912 में जर्मन विद्वान अल्फ्रेड वेगनर ने महाद्वीपीय प्रवाह सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। वेगनर ने पूर्व जलवायु शाखा, ननस्पति शाखा और भूगर्भ शास्त्र के प्रमाणों के आधार पर यह माना कि कार्बोनिफेरस युग में विद्र के समस्त भूखण्ड एक ही स्थल खण्ड के रूप में थे जिसे पैंजिया कहा गया। पैंजिया के चारों ओर विशाल महासागर था जिसे पैंथालासा नाम दिया गया। पैंजिया में पूर्व से पश्चिम दिशा में विस्तारित एक सागर था जिसे टैथिस सागर कहा जाता था। टैथिस सागर के उत्तर में उत्तरी अमेरिका, यूरोप तथा एशिया लारेशिया (अंगारालैण्ड) के रूप में तथा दक्षिण में दक्षिणी अमेरिका अफ्रीका, मेडागारकर, प्रायद्वीपीय भारत, ऑस्ट्रेलिया तथा अण्टार्कटिका गोंडवानालैण्ड के रूप में स्थित थे।

वेगनर ने पैंजिया में भूखण्ड की तीन परतें–सिंयाल, सीमा और निफे मानी। सियाल जो महाद्वीपीय भाग थे, हल्के तत्वों से बने होने के कारण सीमा (महासागरीय तली) पर तैर रहे थे। कालान्तर में पैंजिया के दोनों भागों का विखण्डन हुआ और भू–खण्डों में दो अलग–अलग दिशाओं में प्रवास उत्पन्न हुआ। ये प्रवाह दो प्रकार के बलों द्वारा सम्भव हुए–

1. उत्तर की ओर या भूमध्य रेखा की ओर प्रवाह–जिसका प्रमुख कारण गुरूत्व बल तथा प्लवनशीलता का बल है।

2. पश्चिम दिशा में प्रवासह–जिसका मुख्य कारण सूर्य तथा चन्द्रमा का ज्वारीय बल है। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर घूमती है। ज्वारीय बल पृथ्वी के भ्रमण पर रोक का कार्य करता है। इस कारण महाद्वीपीय भाग पीछे छूट जाते हैं तथा स्थल भाग पश्चिम की ओर प्रवाहित होने लगते हैं।

जुरैसिक युग में गोंडवानालैण्ड का विभंजन हुआ तथा ज्वारीय बल के कारण प्रायद्वीपीय भारत, मेडागास्कर, ऑस्ट्रेलिया तथा अण्टार्कटिका गोंडवानालैण्ड से अलग होकर प्रवाहित हो गए इसी समय उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका ज्वारीय बल के कारण पश्चिम की ओर प्रवाहित हो गए। प्रायद्वीपीय भारत के उत्तर की ओर प्रवाहित होने के कारण हिन्द महासागर का निर्माण हुआ। उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका के पश्चिम की ओर प्रवाहित होने के कारण अटलांटिक महासागर का निर्माण हुआ। इस प्रकार पैंथालासा पर कई दिक्षाओं से महाद्वीपों के अतिक्रमण के कारण उसका आकार संकुति हो गया तथा उसका अवशिष्ट भाग पैंथालासा बना। इस प्रकार पैंथालासा पर कई दिशाओं से महाद्वीपों के अतिक्रमण के कारण उसका आकार संकुचित हो गया तथा उसका अवशिष्ट भाग पैंथालासा बना। इस प्रकार स्थल तथा जल का वर्तमान स्वरूप प्लायोसीन युग तथा पूर्ण हो गया था।

वेगनर के अनुसार पेंजिया से महाद्वीपों एवं महासागरों का निर्माण

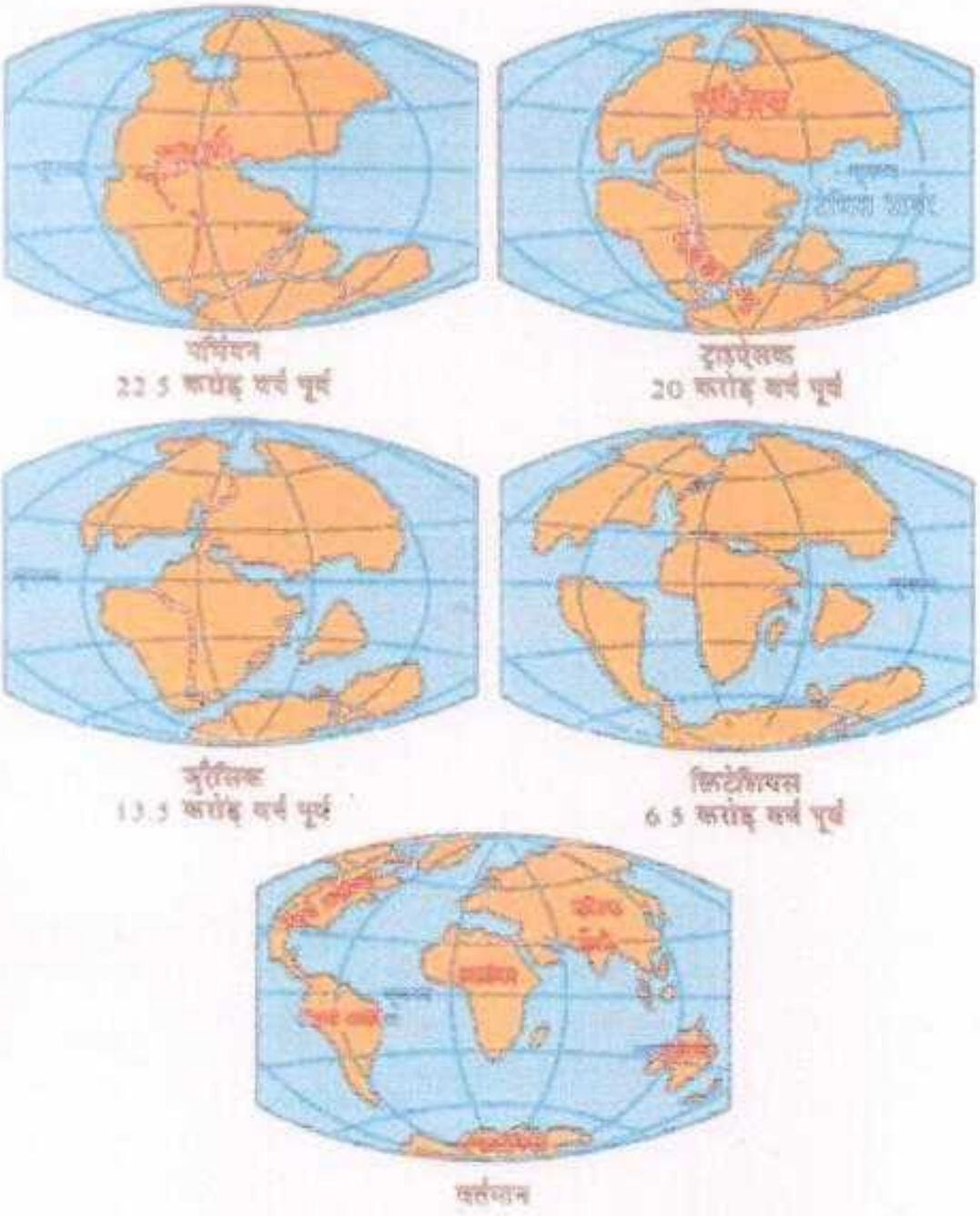

महाद्वीपीय प्रवाह सिद्धान्त के पक्ष में प्रमाण :–

भूगर्भिक बनावट जलवायु तथा वनस्पतियों के वितरण के आधार पर वेगनर ने ये प्रमाणित करने का प्रयास किया कि प्रारम्भ में सभी स्थल भाग पैंजिया के रूप में थे। वेगनर ने सिद्धान्त की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित तथा प्रस्तुत किए–

(1) वेगनर के अनुसार जिस प्रकार किसी वस्तु के दो टुकड़े करके पुनः मिलाया जा सकता है उसी प्रकार उत्तरी अमेरिका के पूर्वी तट को यूरोप के पश्चिमी तट से तथा दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी तट को अफ्रीका के पश्चिमी तट से मिलाया जा सकता है।

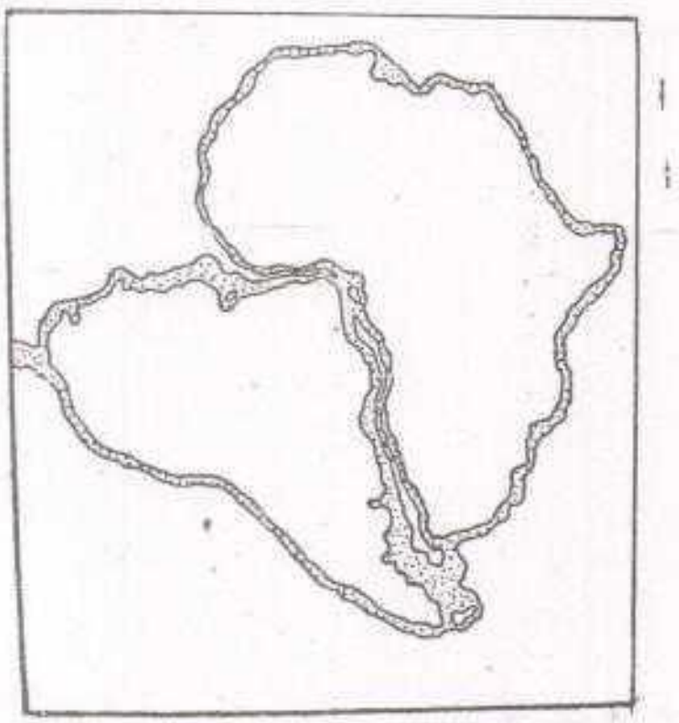

द० अमेरिका तथा अफ्रीका का पुनर्संगठन।

(2) भूगर्भिक प्रमाणों के आधार पर अटलांटिक महासागर के दोनों तटों के कैलीडोनियन तथा हर्सीनियम पर्वत क्रमों में समानता पायी जाती है।

(3) स्कैण्डिनेविया के उत्तरी भाग में पाये जाने वाले लेमिंग नामक छोटे–छोटे जन्तु अधिक संख्या में हो जाने पर पश्चिम की ओर भागते हैं और आगे स्थल भाग न होने के कारण जलमग्न हो जाते हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि अतीतकाल में जल स्थल भाग एक थे ये तो जन्तु पश्चिम की ओर जाते थे।

(4) ग्लोसोप्टरिस वनस्पति का भारत, द0 अफ्रीका, फॉकलैण्ड, ऑस्ट्रेलिया तथा अण्टार्कटिका में पाया जाना इस बात को प्रमाणित करता है कि अतीतकाल में ये सभी स्थल भाग आपस में जुड़े हुए था।

(5) कार्बोनिफेरस युग के हिमानीकरण के प्रभाव का ब्राजील, फॉकलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, प्रायद्वीपीय भारत तथा आस्ट्रेलिया में पाया जाना भी स्थल भागों के एक होने के तथ्य का प्रमाणित करता है।

संवहन–धारा सिद्धान्त (Convectional Current Theory) :–

1928 ई0 में आर्थर होम्स ने बताया कि पृथ्वी के आन्तरिक भाग में रेडियोधर्मी तत्वों से निकली गर्मी से उर्ध्वाधर (लम्बवत रूप में) संवहन धाराएं उत्पन्न होती है जो भू प्लेटों को गति प्रदान करती है। ये गर्म संवहन धाराएं ऊपर उठकर भूपृष्ठ पर पहुँचकर ठण्डी हो जाती है और भारी होकर पुनः नीचे की ओर चलना प्रारम्भ कर देती है। इससे प्लेटों में गति उत्पन्न हो जाती है। जहाँ पर संवहनीय धाराएं विपरीत दिशा में अपसरित होती है वहाँ भूपृष्ठ पर प्लेटें एक दूसरे से दूर खिसकती हैं और जहाँ संवहन तरंगें आपस में मिल जाती है और पुनः केन्द्र की ओर संचालित होती है। उस स्थान पर प्लेटें एक दूसरे के समीप आ जाती है।

संवहन ऊष्मा के स्थानान्तरण या संचरण की एक विधि है। किसी तरल पदार्थ में अणुओं के समग्र स्थानान्तरण द्वारा ऊष्मा का आदान–प्रदान होता है। अणुओं की इस प्रकार की गति को संवहन धारा कहते हैं।

जब दो संवहनीय धाराएं भू पृष्ठ के नीचे एक–दूसरे की विपरीत दिशा की ओर गति करती हैं तो धरातल में तनाव उत्पन्न हो जाता है। तनाव के कारण महाद्वीपीय मध्यभाग पतले होकर खण्डित हो जाते हैं और एक दूसरे से दूर होने लगते हैं जिसके कारण महाद्वीप के मध्य भू–अभिनतियों का जन्म होता है। जिनमें दोनों ओर से तलछट और निक्षेप का जमाव होता रहता है। इसमें विपरीत जल संवहनीय धाराएं एक–दूसरे की ओर प्रवाहित होती है तो नीचे की ओर दबाव के कारण दोनों ओर के भूखण्ड एक–दूसरे के निकट आ जाते हैं जिस कारण भू अभिनतियों का तलछट सिकुड़ कर बलित पर्वतों का रूप धारण कर लेता है। इसका प्रमुख उदाहरण–टैथिस सागर की भू अभिनति में हिमालय तथा आल्पस पर्वतों का निर्माण है।

प्लेट विवर्तनिकी सिद्धान्त (Plate Tectonics Theory)-

पृथ्वी का स्थलमण्डल 6 बड़ी और 20 छोटी दृढ़ एवं कठोर भूप्लेटों में विभक्त है। ये प्लेटों स्थलमण्डल के ठीक नीचे विघमान दुर्बलतामण्डल के ऊपर तैरती हुई गतिशील रहती हैं। 1967 में मैकेन्जी, पारकर और मोरगन ने प्लेटों के स्वभाव तथा प्रवाह से सम्बन्धित अवधारणा प्रस्तुत की, जिसे प्लेट विवर्तनिकी कहा गया।

महाद्वीपों का निर्माण करने वाली भूप्लेट महाद्वीपीय भूप्लेट तथा महासागरों के तल का निर्माण करने वाली भूप्लेट महासागरीय भूप्लेट कहलाती हैं। वर्तमान समय तक 6 प्रमुख– यूरेशियन प्लेट, इण्डियन प्लेट, अफ्रीकी प्लेट, अमेरिका प्लेट, पैसिफिक प्लेट तथा अण्टार्कटिक प्लेट तथा 20 गौण प्लेटों का निर्धारण किया गया है। प्लेटों की गति और गतिजन्य कियाओं के फलस्वरूप प्लेटों के सहारे ज्वालामुखी, पर्वत निर्माण, भ्रंसन, भूपर्पटी का निर्माण आदि विवर्तनिकी घटनाएं अस्तित्व में आती हैं। प्लेट विवर्तनिकी के प्रमाण प्लेटों के मध्य स्थित क्षेत्रों (प्लेट सीमा) में स्पष्टत देखने को मिलते हैं।–

चित्र–4

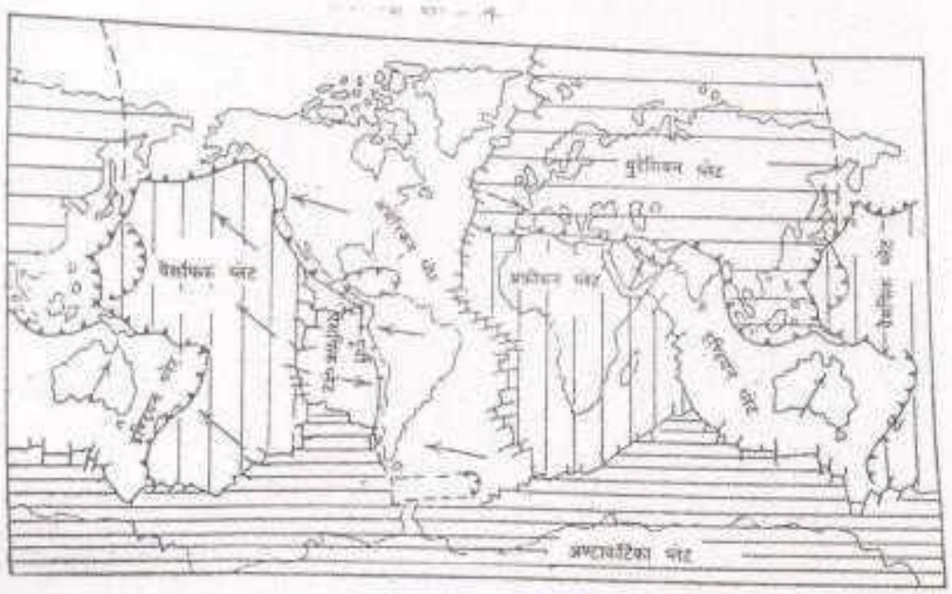

प्लेटों का विश्व वितरण।

प्लेट सीमाएं– प्लेट सीमाएं तीन प्रकार की होती है–

1– अपसारी प्लेट सीमाएं– अपसारी प्लेट सीमा को रचनात्मक प्लेट सीमा अथवा संवर्धी प्लेट सीमा भी कहते हैं। इन प्लेट सीमाओं के सहारे नई भूपर्पटी का निर्माण होता हैं। यह निर्माण लावा के निरन्तर ऊपर की ओर प्रवाह होने के कारण होता है। इन प्लेट सीमाओं पर प्लेटे एक–दूसरे की विपरीत दिशा में गतिशील रहती हैं। जैसे–उत्तरी अमेरिकी प्लेट और यूरेशियाई प्लेट के परस्पर विपरीत दिशा में गति करने के कारण अटलांटिक कटक का निर्माण हुआ है।

2– अभिसारी प्लेट सीमाएं– अभिसारी प्लेट सीमा को विनाशात्मक प्लेट सीमा भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत दो प्लेट आमने सामने इस तरह गतिशील होती हैं कि हल्के पदार्थों वाली प्लेट का अग्र किनारा अधिक घनत्व वाली भारी पदार्थों से निर्मित प्लेट के अग्र किनारे के ऊपर चढ़ जाता है। फलस्वरूप भारी पदार्थ वाले प्लेट किनारे का निचली मैण्टल में क्षेपण हो जाता हैं। अतः प्लेट के किनारों का ह्रास होता जाता है। विनाशी प्लेट सीमाओं के सहारे ज्वालामुखी, भूकम्पीय घटनाओं, बलित पर्वत , द्वीपीय चाप , सागरीय चाप, सागरीय गर्व आदि का निर्माण होता है।

3. संरक्षी प्लेट सीमाएं– संरक्षी प्लेट सीमा को शीयर प्लेट सीमा भी कहते है। इनके सहारे दो प्लेटे एक –दूसरे के बगल से खिसकते हैं जिस कारण रूपान्तर भ्रंश का सृजन होता है। इन सीमाओं के सहारे ने तो नई भूपर्पटी का निर्माण होता हैं और न ही भूपर्पटी का विनाश होता है।

स्थलमाण्डलीय प्लेट विभिन्न प्रारूपों में गतिशील तथा प्रवाहित होती है। प्लेट में स्थित महाद्वीपीय तथा महासागरीय भाग प्लेट के प्रवाह के साथ ही स्थानान्तरिय

होते हैं। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर हेस ने महाद्वीपों के प्रवाह के पक्ष में प्लेट विवर्तनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन 1960 में किया। हेस के अनुसार महाद्वीप तथा महासागर विभिन्न प्लेटों के ऊपर स्थित हैं। जब ये प्लेटें प्रवाहित होती है। तो उनके साथ महाद्वीप तथा महासागरीय तली भी विस्थापित हो जाती है। कार्बोनिफेरस युग पैंजिया के विभिन्न प्लेटों के स्थानान्तरण तथा प्रवाह के कारण ही वर्तमान महाद्वीपों तथा महासागरों का रूप प्राप्त हुआ है। इनके प्रारूपों में भविष्य में भी परिवर्तन हो सकता है क्योंकि इन प्लेटों में प्रवाह अब भी जारी है।

प्लेट के संचलन के लिए उत्तरदायी बल–

उपरोक्त सभी सिद्धान्त इस बात पर बल देते है। कि पृथ्वी का धरातल और भूगर्भ स्थिर न होकर गतिमान है। अधिकांश विद्वान पृथ्वी के आन्तरिक भाग में तापीय संवहन धाराओं को ही प्लेट में गति उत्पन्न करने का प्रमुख कारण मानते है। संवहन धाराओं के द्वारा ऊष्मा की उत्पति की खोज रमफोर्ड ने 179 ई0 में की थी। बाद में आर्थर होम्स ने रेडियोक्टिवता द्वारा पृथ्वी के भीतर सवहन धाराओं की उत्पति के बारे में बताया।

चित्र संख्या–5.

तापीय संवहन धाराओं का प्रक्रम तथा प्लेटों का संचलन।

भारतीय प्लेट का संचलन

भारतीय प्लेट में प्रायद्वीप भारत और आस्ट्रेलिया महाद्वीपीय भाग सम्मिलित हैं। हिमालय पर्वत श्रेणियों के साथ–साथ पाया जाने वाला प्रविष्ठन क्षेत्र इसकी उत्तरी सीमा निर्धारित करता है – जो महाद्वीपीय–महाद्वीपीय अभिसरण के रूप में हैं। (अर्थात् दो महाद्वीपीय प्लेटों की सीमा है) यह पूर्व दिषा में म्यॉमार के राकिन्योमा पर्वत से होते हुए एक चाप के रूप में जावा खाई तक फैला हुआ है। इसकी पूर्वी सीमा एक विस्तारित तल है, जो आस्ट्रेलिया के पूर्व में दक्षिणी पष्चिमी सीमा पाकिस्तान की किरथर श्रेणियों का अनुसरण करती है। यह आगे मकरान तट के साथ–साथ होती हुई दक्षिण–पूर्वी चागोस द्वीप समूह के साथ–साथ लाल सागर द्रोणी में जा मिलती है। भारतीय तथा आर्कटिक प्लेट की सीमा भी महासागरीय कटक से निर्धारित होती है (जो एक अपसारीय सीमा है) और यह लगभग पूर्व–पष्चिम दिषा में होती हुई न्यजीलैण्ड के दक्षिण में विस्तारित तल में मिल जाती है।

भारत एक बृहत् द्वीप था जो आस्ट्रलियाई तट से दूर एक विषाल महासागर में स्थित था। लगभग 22.5 करोड़ पहले तक टेथीस सागर इसे एषिया महाद्वीप से अलग करता था। ऐसा माना जाता है कि लगभग 20 करोड वर्ष पहले, जब पैंजिया विभक्त हुआ तब भारत ने उत्तर दिषा की ओर खिसकना आरम्भ किया। लगभग 4 से 5 करोड़ वर्ष पहले भारत एषिया से टकराया परिणामस्वरूप हिमालय पर्वत का उत्थान हुआ। 7.1 करोड़ वर्ष पहले से आज तक की भारत की स्थिति मानचित्र संख्या 6 में दर्षायी गई है।